विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	**P5: भाषाविज्ञान**
इकाई सं. एवं शीर्षक	**M9: स्वनिम की अवधारणा : स्वनिम, उपस्वन और स्वन**
इकाई टैग	**HND_P5_M9**

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र समन्वयक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
इकाई-लेखक	**डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय** एसोशिएट प्रोफेसर, भाषा अध्ययन विभाग, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : pandey_anilkumar61@rediffmail.com
इकाई समीक्षक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
भाषा संपादक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. स्वन, स्वनिम और उपस्वन की अवधारणा
4. स्वनिमों का वर्गीकरण
5. स्वनिमिक अध्ययन का इतिहास
6. स्वनिम और स्वन
7. स्वनिम और उपस्वन
8. स्वनिम और अक्षर
9. व्यतिरेकी और परिपूरक वितरण
10. स्वनिम और व्यावर्तक अभिलक्षण
11. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप -

- स्वन, स्वनिम और उपस्वन की अवधारणा और स्वरूप को समझ सकेंगे।
- स्वन, स्वनिम और उपस्वन में संबंध और अंतर को समझ सकेंगे।
- स्वनिमिक अध्ययन का इतिहास जान सकेंगे।
- स्वनिमों के वर्गीकरण से परिचित हो सकेंगे।
- व्यतिरेकी और परिपूरक वितरण से परिचित हो सकेंगे।
- स्वनिम और विभेदक लक्षण को जान सकेंगे।

2. प्रस्तावना

भाषा में उच्चारण की सबसे छोटी भौतिक इकाई 'स्वन' है जिसे ध्वनि के रूप में देखा और विश्लेषित किया जा सकता है। किंतु स्वनों के निर्मित होने की मूल संकल्पनात्मक इकाई 'स्वनिम' है। 'स्वन' और 'उपस्वन' की अवधारणा स्वनिम की अवधारणा के सापेक्ष ही है। स्वनिम भाषा की व्यवस्था में पाए जाते हैं। किसी भाषा में पाई जाने वाली सबसे छोटी अर्थभेदक इकाई 'स्वनिम' होती है। स्वनिमों को जोड़कर रूपिम और शब्द आदि बड़ी भाषिक इकाइयों का निर्माण किया जाता है।

स्वनों का विश्लेषण करते हुए 'स्वनिमों' और 'उपस्वनों' की खोज की जाती है। इसके लिए स्वनों का 'व्यतिरेकी वितरण' (Contrastive distribution) और 'परिपूरक वितरण' (Complementary distribution) के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है। स्वनिमविज्ञान में स्वनिमों के प्रकार्य का विवेचन किया जाता है। स्वनिमों का निर्धारण अर्थभेदकता के आधार पर किया जाता है।

3. स्वन, स्वनिम और उपस्वन की अवधारणा

कोई भी भाषिक ध्वनि स्वन है। इसकी अवधारणा भाषा निरपेक्ष होती है। स्वनिमों का उच्चरित रूप स्वन कहलाता है। अर्थात जब स्वनिम उच्चरित होते हैं तो वही स्वन कहलाते हैं। इसे विस्तार से आगे 'स्वनिम और स्वन' शीर्षक के अंतर्गत व्याख्यायित किया जाएगा।

स्वनिम किसी भाषा की लघुतम अर्थभेदक इकाई है। इसकी सत्ता अमूर्त होती है और यह मानव मस्तिष्क में होता है। मानव मस्तिष्क में स्वनिम संकल्पनात्मक रूप में रहते हैं और उन्हीं के आधार पर मनुष्य उनका बार-बार भाषा उत्पादन (अभिव्यक्ति) और बोधन में उपयोग करता है। स्वनिमों को दो स्लैश के बीच ('/ /' में) प्रदर्शित किया जाता है।

किसी स्वनिम विशेष के ही जब एक से अधिक रूप भाषा में प्रचलित हो जाते हैं तो वे आपस में उपस्वन कहलाते हैं। उपस्वन का प्रयोग संबंधित स्वनिम के स्थान पर करने पर शब्द का अर्थ नहीं बदलता है। स्वनिम और उपस्वन एक ही प्रकार्य संपन्न करते हैं। उनके प्रयोग की स्थितियाँ अलग-अलग होती हैं। दोनों में संबंध और अंतर को आगे 'स्वनिम और उपस्वन' शीर्षक के अंतर्गत स्पष्ट किया जाएगा।

4. स्वनिमों का वर्गीकरण

स्वनिमों के दो वर्ग किए गए हैं – खंडात्मक और अधिखंडात्मक।

4.1 खंडात्मक : खंडात्मक स्वनिम वे स्वनिम हैं जिनका एक निश्चित अवधि में उच्चारण होता है तथा जो अनुक्रम में प्रयुक्त होते हैं। इसके अलावा इन स्वनिमों के और अधिक खंड व्यावर्तक अभिलक्षणों (Distinctive features) के रूप में किए जा सकते हैं। इनके मुख्यत: दो भेद किए गए हैं –

4.1.1 स्वर

4.1.2 व्यंजन

4.1.1 स्वर : स्वर वे भाषिक ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण के समय मुख विवर से प्रश्वास के मार्ग में कोई रुकावट नहीं होती है। स्वरों का उच्चारण स्वतंत्र रूप से किया जाता है। हिंदी में अंग्रेजी से आगत 'ऑ' सहित 11 स्वर माने जाते हैं –

अ आ ऑ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ

कुछ हिंदी वैयाकरणों द्वारा 'ऋ' को भी हिंदी में स्वर के अंतर्गत रखा जाता है, किंतु यदि उच्चारण की दृष्टि से देखा जाए तो आज यह स्वर के रूप उच्चरित होने के बजाए 'रि' के रूप में उच्चरित होता है। संस्कृत में इसका उच्चारण स्वर की तरह किया जाता था, किंतु हिंदी में यह व्यंजनात्मक हो गया है।

4.1.2 व्यंजन : व्यंजन वे भाषिक ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में मुख विवर में विकार उत्पन्न होता है। अर्थात इनके उच्चारण में मुख विवर में वायु प्रवाह को कहीं-न-कहीं से बाधित किया जाता है। प्राय: व्यंजनों का स्वतंत्र रूप से उच्चारण नहीं किया जाता। कोई भी व्यंजन किसी-न-किसी स्वर के साथ जुड़कर ही उच्चरित होता है।

हिंदी में निम्नलिखित व्यंजन हैं –
क ख ग घ ङ क़ ख़ ग़
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण ड़ ढ़
त थ द ध न
प फ ब भ म फ़
य र ल व
श ष स ह ज़

नोट : ध्यान दें कि हिंदी वर्णमाला में पाए जाने वाले 'क्ष, त्र, ज्ञ' संयुक्त वर्ण हैं, जो दो स्वनिमों के मिलने से बने हैं, जैसे- क्ष = क् + ष, त्र = त् + र, ज्ञ = ज् + ञ। अतः हिंदी व्यंजनों की सूची में इन्हें स्थान नहीं दिया जा सकता है। लिखित रूप अलग होने के कारण इन्हें वर्णमाला में रखा जाता है।

इनमें अरबी फ़ारसी से ली गई कुछ आगत ध्वनियाँ तथा देशज ध्वनियाँ भी हैं जिन्हें पूर्व में प्राप्त निकटतम हिंदी स्वनिमों के उपस्वनों के रूप में रखा जा सकता है। इस प्रकार स्वनिम-उपस्वन युग्म इस प्रकार बनाए जा सकते हैं–

/क/ → क, क़
/ख/ → ख, ख़
/ग/ → ग, ग़
/ज/ → ज, ज़
/ढ/ → ढ, ढ़
/ड/ → ड, ड़

/फ/ → फ, फ़

कुछ शब्दों में अरबी/फारसी के स्वनिमों के होने या न होने के कारण अर्थभेद भी होता है, जैसे- राज = राज्य करने की अवस्था या शासन, राज़ = रहस्य। ऐसी स्थिति में इन्हें दो स्वतंत्र स्वनिम भी माना जा सकता है।

स्वर और व्यंजन के रूप में प्राप्त होने वाले खंडात्मक स्वनिमों का विविध आधारों पर वर्गीकरण भी किया जाता है। स्वनविज्ञान में यह वर्गीकरण मुख्य रूप से 'उच्चारण स्थान' और 'उच्चारण प्रयत्न' आदि के आधार पर किया जाता है। स्वरों के वर्गीकरण हेतु डैनियल जोन्स द्वारा 'मानस्वरों (Cardinal Vowels) का एक चतुर्भुज' दिया गया है जिसमें उन्हें चिह्नित किया जा सकता है।

नोट : हिंदी में प्रयुक्त अनुस्वार (ं), अनुनासिक (ँ) और विसर्ग (ः) अतिरिक्त लक्षण हैं, जो किसी भी स्वर या व्यंजन के साथ प्रयुक्त होने की योग्यता (कुछ विशेष परिस्थितियों को छोड़कर, जैसे- 'ह' के बाद विसर्ग नहीं आता।) रखते हैं। इसलिए इन्हें भी मूल स्वनिमों की उपर्युक्त सूची में स्थान नहीं दिया गया है।

4.2 अधिखंडात्मक

स्वनिमों का भाषा व्यवहार में प्रयोग करते समय उनके साथ कुछ ऐसे भाषिक तत्व भी आ जाते हैं जो स्वयं 'स्वन' या 'ध्वनि' नहीं होते, किंतु शब्द या वाक्य पर उनका प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। ऐसे भाषिक अभिलक्षणों को 'अधिखंडात्मक अभिलक्षण' या 'स्वनगुणिक अभिलक्षण' (Suprasegmental Features) कहा जाता है। भाषा व्यवहार में ये अभिलक्षण शब्दों और वाक्यों के साथ जुड़कर आते हैं और अभिव्यक्ति को प्रभावित करते हैं या अभिव्यक्ति के अर्थ को परिवर्तित कर देते हैं। इस प्रकार के कुछ प्रमुख अधिखंडात्मक अभिलक्षण निम्नलिखित हैं –

4.2.1 मात्रा (Length) : किसी स्वन के उच्चारण में लगने वाली समयावधि को 'मात्रा' कहते हैं। कुछ स्वनों के उच्चारण में कम समय लगता है और कुछ के उच्चारण में अपेक्षाकृत अधिक। इस दृष्टि से भारतीय वैयाकरणों द्वारा मात्रा के तीन स्तर बताए गए हैं –

(क) ह्रस्व : यह किसी स्वन में उच्चारण में लगने वाले समय की कम मात्रा है, जैसे – अ, इ, उ आदि।

(ख) दीर्घ: यह किसी स्वन में उच्चारण में लगने वाले समय की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा है, जैसे – आ, ई, ऊ आदि।

(ग) प्लुत : यह किसी स्वन में उच्चारण में लगने वाले समय की बहुत अधिक मात्रा है। संस्कृत के 'ओउम्' का 'ओउ' इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। हिंदी में कोई प्लुत स्वन नहीं है।

4.2.2 बलाघात (Stress) : भाषा व्यवहार में किसी 'अक्षर' पर कम या अधिक बल देने की अवस्था बलाघात है। सामान्यत: बलाघात किसी स्वन विशेष पर न होकर अक्षर पर ही होता है। जिस अक्षर पर अधिक बलाघात होता है उसका स्वर उच्च होता है। इसे मशीन में चित्रात्मक रूप से या 'डेसिबल' से मापकर तुलनात्मक रूप से स्पष्ट देखा जा सकता है। बलाघात के कम या अधिक होने के कारण शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के 'Present' शब्द को देखा जा सकता है जिसके पहले अक्षर पर बलाघात होने पर (Present) इसका अर्थ 'उपहार' और दूसरे अक्षर पर बलाघात होने पर (Present) इसका अर्थ 'प्रस्तुत करना' होता है। वाक्य स्तर पर भी उच्चारण में किसी शब्द-विशेष पर बल दिया जाता है, जैसे- 'मोहन घर जाओ।' वाक्य में यदि 'घर' शब्द पर बल दिया गया है तो इसका अर्थ हुआ कि 'घर' ही जाओ, कहीं और नहीं।

4.2.3 सुर और अनुतान (Tone and Intonation) : इनका संबंध स्वरतंत्रियों के कंपन में अंतर से है। स्वरतंत्रियों में कंपन होने को तान (Pitch) कहा जाता है, जिसे हर्ट्ज़ (hertz) में मापा जाता है। कंपन की अधिकता और कमी अथवा सामान्य स्थिति के आधार पर इनके 'उच्च', 'निम्न' और 'सम' तीन भेद किए जा सकते हैं। कंपन में यह अंतर जब शब्द स्तर पर होता है तो इसे 'सुर'

और जब वाक्य स्तर पर होता है तो इसे 'अनुतान' कहते हैं। शब्द या वाक्य का उच्चारण करते समय सुर या अनुतान में अंतर होने से अभिप्राय बदल जाता है। इसके अलावा इस अंतर के आधार पर वक्ता की मनस्थिति का भी अनुमान किया जा सकता है।

4.2.4 संहिता (Juncture) : शब्द अथवा वाक्य के उच्चारण में दो अक्षरों के बीच सीमा को व्यक्त करने वाली इकाई 'संहिता' है। यदि यह सीमा स्पष्ट न हो तो अर्थबोध प्रभावित होता है और कई बार तो अर्थ का अनर्थ होने की संभावना बनी रहती है, जैसे –

(क) (मैंने) यह दवाई **पी ली** है। → यह दवाई **पीली** है।

(ख) लड्डू **बंद रखा** गया। → लड्डू **बंदर खा** गया।

(ग) उसे रोको **मत, जाने** दो। → उसे **रोको, मत** जाने दो।

इनमें अक्षर के सीमांकन और विराम के कारण अर्थ पूर्णत: परिवर्तित हो जा रहा है। लेखन में यह अंतर समझ में आ जाता है, क्योंकि दो शब्दों के बीच खाली स्थान (Blank space) होता है, परंतु उच्चारण में हम लगातार बोलते हैं। इसलिए श्रोता का मस्तिष्क संभावित विरामों (Potential pauses) के आधार पर दो शब्दों को अलगाता है। इसे भाषा प्रयोगशाला में उच्चरित वाक्य की ध्वनि तरंग को देखकर सरलतापूर्वक समझा जा सकता है।

5. स्वनिमिक अध्ययन का इतिहास

स्वनिम की संकल्पना पोलिश भाषाविद जॉन बॉदविन द कुर्तिने द्वारा दी गई। 1930 के दशक में प्राग संप्रदाय के एन.त्रुबेत्स्काय ने भाषा के स्वनिमिक अध्ययन को एक नई दिशा दी। 1940 के दशक में प्राग संप्रदाय के ही सदस्य रोमन याकोब्सन द्वारा इस पर अमेरिका में कार्य किया गया। प्राग संप्रदाय द्वारा 'स्वनिम' को परिभाषित किया गया और द्विआधारी प्रतियोग (Binary Oppositions) के आधार पर स्वनिमों के विश्लेषण पर बल दिया गया। अमेरिका के संरचनात्मक संप्रदाय के विद्वानों द्वारा भी इस क्षेत्र में कार्य किया गया, जिनमें लियोनार्ड ब्लूमफील्ड प्रमुख हैं। ब्लूमफील्ड व्यवहारवादी भाषावैज्ञानिक हैं। उन्होंने स्वनिम को 'मूर्त' माना है, जबकि प्रकार्यवादियों ने इसे अमूर्त माना है। बाद में भी स्वनिम की सत्ता को अमूर्त ही माना गया है।

1968 में प्रजनक स्वनिमविज्ञान के क्षेत्र में कार्य हुआ, जिसके प्रणेताओं में मॉरिस हाले और नोअम चॉम्स्की प्रमुख हैं। इसमें किसी वाक्य की अमूर्त वाक्य विन्यासात्मक बाह्य संरचना और स्वनिक तथ्यों के बीच संबंधों का विश्लेषण किया जाता है। 1969 में डेविड स्टैंप ने प्राकृतिक स्वनिमविज्ञान (Natural Phonology) की चर्चा की। 1980 के दशक में अनुशासन स्वनिमविज्ञान (Government Phonology) भी प्रस्तुत किया गया है।

6. स्वनिम और स्वन

स्वनिम संकल्पनात्मक इकाई है जो हमारे मस्तिष्क में रहती है। यह हमेशा एक ही होती है। किंतु इसके आधार पर हम पूरे जीवन में हजारों/लाखों स्वनों का निर्माण करते हैं और व्यवहार में प्रयोग करते हैं। जैसे – एक स्वनिम के रूप में 'क' हमारे मस्तिष्क में एक बार ही है, किंतु यदि यह वाक्य बोला जाए –

*ए**क** बाल**क** क**म**रे **के** को**ने** में **काँ**पते हुए **काम** क**र** रहा है।*

इसमें 'क' का प्रयोग '8' बार हुआ है। अत: स्वनिम अर्थात 'क' एक ही है और इसके ये आठ स्वन हैं। इस वाक्य में आए स्वनिम और स्वन के रूप में उनके प्रयोग की संख्या इस प्रकार है –

क्र.सं.	स्वनिम	स्वन
1	ए/े	7
2	क	8
3	ब	1

4	ा	**4**
5	**ल**	**1**
6	**म**	**3**
7	**र**	**3**
8	ो	**1**
9	**न**	**1**
10	ं/ँ	**2**
11	**प**	**1**
12	**त**	**1**
13	**ह**	**3**
14	ै	**1**
कुल	**14**	**37**

यदि इस वाक्य को और लंबा कर दिया जाए या इसके आगे एक-दो वाक्य लिख दिए जाएँ जो इन्हीं स्वनिमों से बने हों तो स्वनों की संख्या बढ़ जाएगी, परंतु स्वनिमों की संख्या इतनी ही रहेगी। यदि इस पृष्ठ पर 'क' का प्रयोग 100 बार हुआ हो तो हमारे मस्तिष्क में उनके लिए 100 क नहीं हैं, बल्कि एक ही अमूर्त 'क' रचना है। अतः किसी भाषा में जितनी अलग-अलग (अर्थभेदक) लघुतम ध्वन्यात्मक इकाइयाँ होती हैं, सभी 'स्वनिम' होती हैं। उनका व्यवहार में प्रयोग स्वन के रूप में होता है। किसी भी भाषा में सीमित संख्या में (प्रायः 100 से कम) ही स्वनिम होते हैं। स्वनों के रूप में लाखों-करोड़ों बार उनका प्रयोग होता है।

7. स्वनिम और उपस्वन

किसी स्वनिम विशेष का वह ध्वन्यात्मक विभेद जो किसी शाब्दिक या रूपिमिक परिवेश में उस स्वनिम के स्थान पर प्रयुक्त होता है, 'उपस्वन' कहलाता है। उपस्वन वह इकाई है जिसका प्रयोग संबंधित स्वनिम के अन्य उपस्वन के स्थान पर करने पर शब्द का अर्थ नहीं बदलता है। स्वनिम के विभिन्न उपस्वन एक ही प्रकार्य संपन्न करते हैं। उनके प्रयोग की स्थितियाँ अलग-अलग होती हैं। किसी स्थिति विशेष में एक प्रयुक्त होता है तो किसी दूसरी स्थिति में दूसरा। दोनों में जो अधिक प्रचलित होता है उसे स्वनिम का प्रतिनिधि मान लिया जाता है और अन्य को उपस्वन। वैसे वे दोनों या सभी आपस में उपस्वन होते हैं। उदाहरण के लिए हिंदी में अरबी/फारसी के शब्दों के आने बाद क़, ख़, ग़, ज़ और फ़ स्वन आ गए हैं। इनके समानांतर हिंदी में क, ख, ग, ज, फ स्वन पहले से मौजूद हैं। कई प्रयोक्ताओं के लिए सामान्य स्थिति में एक के स्थान पर दूसरे को रखने पर अर्थभेद भी नहीं होता। इसलिए 'क' और 'क़', 'ख' और 'ख़' आदि को एक दूसरे का उपस्वन कहा जा सकता है जिनमें 'क' और 'ख' स्वनिम हैं।

इसी प्रकार 'ड' और 'ड़', 'ढ' और 'ढ़' एक दूसरे के उपस्वन हैं जिनमें 'ड' और 'ढ' स्वनिम हैं। इन्हें इस प्रकार दर्शाया जा सकता है –

/क/ - [क]~[क़]
/ख/ - [ख]~[ख़]
/ढ/ - [ढ]~[ढ़]
/ड/ - [ड]~[ड़] आदि।

8. स्वनिम और अक्षर

स्वनिम किसी भाषा की सबसे छोटी इकाई है। अक्षर किसी भाषा की एक श्वासाघात में उच्चरित सबसे छोटी इकाई है। एक 'अक्षर' में एक स्वनिम भी हो सकता है और एक से अधिक स्वनिम भी हो सकते हैं। इसलिए अक्षर को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है – "एक ही श्वासाघात में उच्चरित स्वन या स्वनों के समूह को अक्षर कहते हैं।" हिंदी में सभी स्वर स्वतंत्र अक्षर हैं। चूँकि व्यंजनों का स्वतंत्र उच्चारण नहीं होता, वे किसी न किसी स्वर के साथ जुड़कर ही आते हैं इसलिए व्यंजन स्वनिम तो हैं किंतु प्राय: स्वतंत्र रूप से अक्षर का निर्माण नहीं करते। हिंदी में एकाधिक स्वनिमों के योग से बने शब्दों में यदि अक्षरों की संख्या देखनी हो तो यह देखना चाहिए किए उस शब्द में कितने स्वर आए हैं। उदाहरण के लिए 'कम' और 'काम' दोनों शब्द एकाक्षरी हैं। इनका विश्लेषण 'क् + अ + म्' तथा 'क् + आ + म्' के रूप में किया जा सकता है। ध्यान रहे कि हिंदी में अंतिम व्यंजन के बाद स्वर नहीं आता। इसलिए दोनों 'म' के बाद 'अ' नहीं दिखाया गया है। 'स्वास्थ्य' हिंदी का सबसे बड़ा एकाक्षरी शब्द है। इसमें 6 स्वन मिलकर एक ही अक्षर का निर्माण करते हैं।

9. व्यतिरेकी और परिपूरक वितरण

किसी भाषिक सामग्री में प्राप्त स्वनों के आपसी संबंध का विश्लेषण 'वितरण' (Distribution) विधि से किया जाता है। इसके लिए दो समान स्वनिक परिवेश वाले शब्दों को लेकर केवल एक स्वन का अंतर करके देखा जाता है कि दोनों में अर्थभेद होता है या नहीं। यदि दोनों में अर्थभेद होता है तो उनके आपसी संबंध को व्यतिरेकी वितरण में और यदि दोनों स्वन समान परिवेश में नहीं आते है तो दोनों के आपसी संबंध को परिपूरक वितरण में माना जाता है, जैसे –

काल - खाल बचा – बजा
डाल – लड़ा – लड़

उपर्युक्त शब्दयुग्मों में पहले दो शब्दयुग्मों के प्रथम स्वनिम आपस में व्यतिरेकी वितरण में हैं, क्योंकि 'क' की जगह 'ख' का प्रयोग होने से दोनों शब्दों का अर्थ बिल्कुल अलग-अलग हो जाता है। 'काल' का अर्थ 'समय' या 'मृत्यु' है तो 'खाल' का अर्थ 'त्वचा' है। इसी प्रकार दूसरे शब्दयुग्म में 'च' की जगह 'ज' कर देने से दो अलग-अलग अर्थों वाले शब्द निर्मित हो गए हैं। इसलिए 'च' और 'ज' ध्वनियाँ परस्पर व्यतिरेकी वितरण में हैं। इसके विपरीत तीसरे शब्दसमूह में 'ड' की जगह 'ड़' और 'ड़' की जगह 'ड' का प्रयोग नहीं होता है इसलिए इनका वितरण आपस में परिपूरक वितरण है।

10. स्वनिम और व्यावर्तक अभिलक्षण

पारंपरिक भाषावैज्ञानिक विश्लेषण के अनुसार स्वनिम किसी भाषा की सबसे छोटी इकाई है। स्वनिमविज्ञान में इसका विश्लेषण किया जाता है, जिसे स्वनिमिक विश्लेषण (Phonemic analysis) या स्वनप्रक्रियात्मक विश्लेषण (Phonological analysis) कहते हैं। स्वनिमिक विश्लेषण के अंतर्गत स्वनिमों का निर्धारण कर उनका वर्गीकरण किया जाता है और वर्गीकृत सूची तैयार की जाती है। इस क्रम में संबंधित भाषा में पाए जाने वाले सभी स्वनिमों का संग्रह किया जाता है और वर्गीकरण के आधार सुनिश्चित किए जाते हैं। पारंपरिक रूप से स्वनिमों का वर्गीकरण उनके उच्चारण स्थान (Place of articulation) और उच्चारण प्रयत्न (Manner of articulation) आदि आधारों पर किया जाता रहा है। आधुनिक भाषाविज्ञान में वर्गीकरण के मुख्य आधार 'व्यावर्तक अभिलक्षण' (Distinctive features) हैं।

11. निष्कर्ष

अत: संक्षेप में स्वनिम किसी भाषा की ध्वनि-व्यवस्था में पाई जाने वाली लघुतम इकाई है। स्वनिमों का अपना अर्थ नहीं होता, किंतु वे अर्थभेदक होते हैं। स्वनिमों का जब व्यवहार में प्रयोग किया जाता है तो वे स्वन कहलाते हैं। किसी एक स्वनिम का जितनी बार प्रयोग किया जाता है उतने स्वन होते हैं किंतु स्वनिम एक ही रहता है। उपस्वन स्वनिम का ही ध्वन्यात्मक विभेद होता है। जिसका प्रयोग संबंधित स्वनिम के स्थान पर करने पर शब्द का अर्थ नहीं बदलता है। स्वनिमों और संस्वनों का निर्धारण समान स्वनिक परिवेश में उनके 'वितरण' के आधार पर किया जाता है। स्वनिमों का विश्लेषण व्यावर्तक अभिलक्षणों के रूप में भी किया जाता है।

e-Pathshala पाठशाला A Gateway to All Post Graduate Courses